डॉ० अम्बेडकर का सामाजिक न्याय–एक अवलोकन

डॉ० चन्द्रदीप राम*

भारत रत्न डॉ० अम्बेडकर बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी एक प्रतिभाशाली व्यक्ति थे। उन्होंने मानवतावादी मूल्यों की स्थापना तथा सामाजिक न्याय की प्राप्ति के लिए अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया। राष्ट्रीय एकता और साम्प्रदायिक सद्भाव के लिए उन्होंने जनजागरण का महत्वपूर्ण कार्य किया एवं समाज की उन्नति और मानव कल्याण के लिए सदैव प्रयत्नशील रहे। समाज में समरसता के पक्षधर डॉ० अम्बेडकर तिरस्कृत, उपेक्षित, निर्बल तथा दलितोत्थान के लिए जीवन–पर्यन्त संघर्षशील रहे।

आधुनिक भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक चिन्तन में अनेक महान पुरूषों का योगदान रहा। उनमें राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द, स्वामी विवेकानन्द, एनी बेसेन्ट, दादाभाई नौरोजी, महात्मा गाँधी और जय प्रकाश नारायण का नाम प्रमुख रूप से आता है। राजाराम मोहन राय पुर्नजागरण के प्रणेता और आधुनिक भारत के जनक थे। उन्होंने हिन्दू धर्म की कट्टरवादिता को नकारा और धार्मिक पाखण्ड, अन्धविश्वास तथा कर्मकाण्ड का जमकर विरोध किया। उन्होनें ब्रह्म समाज की स्थापना करके उसके माध्यम से समाज में आचार–विचार में व्याप्त बुराईयों को दूर करने का प्रयास किया। इसी प्रकार राय ने सती प्रथा के विरूद्ध संघर्ष छेड़ा।[1] साथ ही राय ने नारी को परिवार की सम्पत्ति में न्यायपूर्ण अधिकार प्रदान किये जाने का भी समर्थन किया तथा भारतीयों में शिक्षा के प्रसार जैसे कामों को बहुत महत्व देते हुए सामाजिक न्याय का सन्देश दिया।

स्वामी विवेकानन्द राष्ट्रीय आन्दोलन के आध्यात्मिक जनक थे। उन्होंने हिन्दू समाज में व्याप्त अंधविश्वास व कर्मकाण्ड पर गहरा प्रहार किया। विवेकानन्द ने हिन्दू धर्म के मानवीय व सामाजिक पक्षों को उजागर किया। उन्होंने भारत में सामाजिक सुधार को बहुत महत्व दिया। वे जातिगत और भेदभाव और छुआछूत के विरूद्ध थे। जाति और छुआछूत को देखकर स्वामी विवेकानन्द ने घोषणा की थी कि 'अरे ऊँची जाति के लोगों समय रहते हुए अपने अधिकारों को इन शूद्रों और मेहनतकारों के हाथों में सौंप दो नहीं तो, जब यह उठेगा तो अपनी एक फूंक से तुम्हारी सारी हस्ती को मिटाकर रख देगा।"[2] उनकी दृष्टि में अस्पृश्य समस्या का समाधान हिन्दू धर्म व समाज में शान्तिपूर्ण सुधार के माध्यम से ही प्रभावकारी हो सकता था। विवेकानन्द सामाजिक न्याय पर आधारित एक आदर्श समाज की स्थापना करना चाहते थे। उनकी दृष्टि में देश के भूखे, नंगे, गरीब और निरक्षर (जो अधिकांश तथा वर्गों व जातियों के हैं) लोगों का उत्थान ही सामाजिक न्याय था।

***सहायक शिक्षक**

20वीं सदी के दूसरे दशक तक राष्ट्रीय आन्दोलन का नेतृत्व गाँधी के हाथों में आ गया। भारत के सामाजिक अन्याय का सबसे अधिक शिकार अछूत वर्ग था। गाँधी जी देश में अछूत वर्ग की अकल्पनीय समस्याओं और अमानवीय जीवन दशाओं से अनभिज्ञ नहीं थे गाँधी जी ने अस्पृश्यता, बाल–विवाह, विधवा पुर्नविवाह निषेध जैसी कुप्रथाओं का विरोध कर सामाजिक न्याय की ओर कदम बढ़ाये। इन सभी के चिन्तन का दृष्टिकोण भिन्न भिन्न था, लेकिन सभी के अपने–अपने चिन्तन में मौलिकता और विशिष्टता थी और सभी ने जाति और छूआछूत की विभीषिका का पूर्णतः विरोध किया।[3]

सामाजिक अन्याय से सम्बन्धित छोटी–छोटी घटनायें सब व्यक्तियों के जीवन में आए दिन घटती रहती थी, परन्तु सभी ने इसको गम्भीरता से नहीं लिया। डॉ0 अम्बेडकर पहले व्यक्ति थे जो 'सामाजिक न्याय' के सबसे बड़े समर्थक के रूप में भारत के रंगमंच पर अवतरित हुए और लाखों करोड़ों अछूतपन से दुःखी शोषित व उत्पीड़ित लोगों के भाग्य विधाता बन गए। डॉ0 अम्बेडकर ने इस छुआछूत और जातिवाद की विभीषिका का न केवल विरोध किया, बल्कि इसे पूर्ण रूप से नष्ट करने का प्रयास किया।4 अम्बेडकर ऐसी व्यवस्था के समर्थक थे जो शुद्ध मानववादी, समतावादी और धर्म निरपेक्षतावादी हो जहां सभी नागरिक संकीर्णता, धर्मान्धता, साम्प्रदायिकता, जातिगत भेदभाव, सामाजिक विषमता तथा आर्थिक विपन्नता के शिकंजों से मुक्त रह सके। इन सभी बुराईयों को मिटाने के लिए अम्बेडकर जीवनभर संघर्षरत रहे। सामाजिक न्याय अंग्रेजी शब्द 'सोशल जस्टिस' का हिन्दी रूपान्तरण है। सभी ने इसका प्रयोग अपनी परिस्थिति और समय के अनुसार किया है तथा उसी के अनुसार इसकी व्याख्या भी की है। 'सामाजिक न्याय' शब्द में न्याय शब्द की सर्वोच्चता है जो मानव जीवन और सामाजिक व्यवस्था की आधारशिला है। यह मानव प्रकृति का पक्ष है, जिसके आधार पर मनुष्य को नैतिक व सदाचारी प्राणी माना जाता है। वस्तुतः न्याय व्यक्ति के सत् विवेक का ही दूसरा नाम है। न्याय की भावना सामाजिक सम्बन्धों और व्यक्तिगत स्वार्थ के बीच संतुलन पैदा करती है और सामाजिक व्यवस्था को नैतिक आधार प्रदान करके उसे मजबूत बनाती है। सामाजिक न्याय, न्याय का वह पक्ष है जो मानव समाज से सम्बन्धित ऐसे आदर्शों को निर्धारित करता है जिनके अनुपालन से व्यक्ति कुटुम्ब, समाज एवं राज्य का अस्तित्व बना रहता है और उसके द्वारा अभाव ग्रस्त लोगों के हितों की समुचित सुरक्षा करके मानव जीवन से सम्बन्धित समस्त गम्भीर अन्यायपूर्ण असन्तुलनों को दूर किया जाता है जिससे सभी नागरिकों का जीवन खुशहाल बने और प्रत्येक व्यक्ति अपनी क्षमता एवं योग्यता के आधार पर राष्ट्र की सत्ता एवं सम्पत्ति में भागीदार बनकर सामाजिक प्रतिष्ठा ग्रहण करने का अवसर प्राप्त करे।[5] सामाजिक न्याय के इतिहास पर विचार किया जाये तो ज्ञात होगा कि सामाजिक जीवन के साथ ही किसी न किसी रूप में इसका भी जन्म हुआ। जब से व्यक्तियों ने एक दूसरे के साथ मिलकर समाज का निर्माण किया तभी से उन्होंने पारस्परिक सहयोग से विद्यमान समस्याओं, अभावों एवं अन्यायों के निराकरण की प्रक्रिया में कुछ ऐसे आदर्श तथा नियमों का

निर्धारण किया जिनसे सभी लोगों के हितों की सुरक्षा हो और कमजोर वर्गों को भी आगे बढ़ने के अवसर प्राप्त हो। सामाजिक जीवन सुचारू रूप से संचालित हो ऐसी उनकी सद्भावना थी। यही सद्भावना सामाजिक न्याय का आधार बनी।[6] सामाजिक न्याय के विषय में डेविड मिलर ने कहा कि 'सामाजिक न्याय की अवधारणा का इतिहास सामाजिक समस्याओं के समाधान का प्रारूप सम्बन्धित समस्याओं की व्याख्या है।[7] नेहरू जी ने कहा था कि, 'हमें ऐसा हिन्दुस्तान बनाना है जिसमें न गरीबी हो, न बेकारी। प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक न्याय मिले और आर्थिक असमानताएँ कम हों। सामाजिक न्याय का विचार विशेष रूप से इस बात पर आधारित है कि सामाज में रहने वाले सभी व्यक्ति समान है और धर्म, जाति, रंग, वंश आदि के आधार पर उन्हें असमान नहीं माना जाना चाहिए।[8]

डॉ0 अम्बेडकर के अनुसार स्वतन्त्रता, समानता और भ्रातृत्व का दूसरा नाम सामाजिक न्याय है। सामाजिक न्याय के लिए स्वतन्त्रता का होना आवश्यक है। नागरिकों के अधिकारों में जितनी अधिक समानता होगी उतना ही वे अपनी स्वतंत्रता का उपभोग कर सकेगें। देश की स्वतंत्रता के साथ–साथ दलितों की सामाजिक स्वतंत्रता में भी अम्बेडकर की गहरी रूचि थी। उनका विचार था कि 'स्वतंत्रता का लाभ दलितों को भी मिल सके क्योंकि जब तक दलित लोग सामाजिक शोषण और अपमान के शिकार रहेगें तब तक उनके लिए स्वतंत्रता का कोई महत्व नहीं होगा। वे तो कल भी गुलाम थे आज भी गुलाम है और कल भी गुलाम रहेगें। अतः उनके जीवन में बदलाव आना आवश्क है।[9] भारतीय संविधान की रचना के समय भी उन्होंने यही विचार रखा था। अम्बेडकर का ध्येय भूमिहीन मजदूरों, गरीब किसानों व श्रमिक वर्ग की समस्याओं का समाधान करके उनके लिए सामाजिक न्याय उपलब्ध कराना था। उन्होंने कहा था कि 'समानता का अर्थ है सभी को समान अवसर मिले और उनकी प्रतिभा को भी प्रोत्साहन दिया जाय। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि हिन्दू समाज का गठन दो सिद्धान्तों पर किया जाए– समानता एवं जाति विहीनता।'[10] सामाजिक न्याय के यथार्थ एंव प्रभावी होने के लिए समाज में मातृत्व का होना भी जरूरी है वैसे समाज में दो प्रकार की शक्तियाँ कार्य करती है– एक है व्यक्ति का स्वयं का हित और दूसरा है भ्रातृत्व की भावना। भ्रातृत्व की प्रकृति कभी–कभी व्यक्ति के हित की विरोधी हो सकती है क्योंकि यह ऐसी भावना है जो व्यक्ति को दूसरों की भलाई के साथ जोड़ती है दूसरों के हित के लिए भी व्यक्ति को वैसे ही कार्य करना चाहिए जैसा कि वह अपने हित के लिए करता है। इस भावना के कारण व्यक्ति अन्य व्यक्तियों को अपना प्रतिद्वन्दी मानकर उन्हें पराजित देखना नहीं चाहता। व्यक्तिवाद स्वार्थपरता को जन्म दे सकता है। वह केवल भ्रातृत्व ही है जो समाज में नैतिक व्यवस्था को बनाये रखने में मदद करता है।

अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अम्बेडकर ने संघर्ष का मार्ग चुना। दलितों ने अपने अधिकारों के प्रति जागृति पैदा करने के उद्देश्य से उनहोंने 1920 में 'मूक नायक' और 1927 में 'बहिष्कृत भारत' के प्रकाशन के लिए सार्थक पहल की।

1927 से 1930 के मध्य उन्होंने दलितों को सार्वजनिक प्रकृति के स्थलों के उपयोग सम्बन्धी अधिकार दिलाने के लिए संघर्ष किया। इसके लिए उन्होंने सबसे पहले महाड के चावदार तालाब का पानी अछूतों के लिए सार्वजनिक कराया। उनहोंने 19 और 20 मार्च 1927 को महाड में एक अछूत सम्मेलन का आयोजन किया। नागरिक अधिकारों की मांग के लिए अम्बेडकर के नेतृत्व में शोषित जनता व डॉ0 अम्बेडकर का यह प्रथम सफल आन्दोलन था। उनके द्वारा सामाजिक न्याय के लिए महाड सत्याग्रह, मनुस्मृति दहन 1927, कालाराम मन्दिर प्रवेश सत्याग्रह आदि मुख्य आन्दोलन थे। अछूतों के सामाजिक न्याय की प्राप्ति के लिए डॉ0 अम्बेडकर का लन्दन के गोलमेज सम्मेलनों में प्रतिनिधित्व करना एक अन्य महत्वपूर्ण सफलता थी। इसका प्रथम गोलमेज सम्मेलन 12 नवम्बर, 1920 को प्रारम्भ हुआ जिसमें अम्बेडकर के साथ अछूतों के दूसरे प्रतिनिधि रायबहादुर श्री निवासन थे। इस सम्मेलन में पहली बार सामाजिक न्याय के संघर्ष में सैकड़ों वर्षों से अत्याचार और अनाचार से पीड़ित अछूतों को न्याय मिलने की कुछ आशा प्रबल हुई। द्वितीय गोलमेज सम्मेलन की बैठक 7 सितम्बर, 1931 को प्रारम्भ हुई। इसमें कांग्रेस के एक मात्र प्रतिनिधि के रूप में गाँधी जी ने भाग लिया। गाँधी जी तथा अम्बेडकर के रूप में गाँधी जी ने भाग लिया। गाँधी जी तथा अम्बेडकर सामाजिक न्याय को अलग–अलग साधनों के माध्यम से स्थापित करना चाहते थे यद्यपि दोनों के उद्देश्यों में समान्ता थी, परन्तु साधनों के प्रयोग का विवाद था।

दलितों के राजनीतिक धरातल के विस्तार के उद्देश्य से अम्बेडकर ने दलितों एवं श्रमिकों को एक संयुक्त राजनीतिक इकाई के रूप में गठित करने का प्रयास किया और इण्डिपेन्डेन्ट लेबर पार्टी (1936) का गठन किया, जिसका उद्देश्य भूमिहीन गरीब किसानों, कृषकों और औद्योगिक मजदूरों की तत्कालिक समस्याओं तथा कठिनाईयों का समाधान करना था। सामाजिक न्याय के लिए उनका महत्वपूर्ण कार्य अछूतों की समस्या का राजनीतिकरण था। इसी को सशक्त बनाने के लिए तथा दलितों में राजनीतिक जागरूकता लाने की दृष्टि से अम्बेडकर ने 'आल इण्डिया शैडयूल्ड कास्ट फैडरेशन (1942)' की स्थापना की तथा 1956 में 'रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इण्डिया' की घोषणा की जिसका गठन डॉ0 अम्बेडकर के महापरिनिर्वाण (6 दिसम्बर 1956) के पश्चात् 3 अक्टूबर, 1957 को हुआ। इन संस्थाओं के परिणामस्वरूप दलितों में बौद्धिक चेतना का प्रसार होना आरम्भ हुआ जिससे सामाजिक नरूय पर चिंतन और मनन का कार्य तीव्र हुआ।

डॉ0 अम्बेडकर को भारतीय संविधान की प्रारूप समिति का अध्यक्ष और स्वतंत्र भारत का पहला विधि मंत्री बनने का गौरव प्राप्त है। विधि मंत्री के रूप में डॉ0 अम्बेडकर की सबसे बड़ी देन 'हिन्दू कोड बिल' का प्रारूप तैयार करना था जिसका उद्देश्य मुख्यतः हिन्दू स्त्रियों को विशेष अधिकार दिलाना था। उन्होंने यह कोड बिल इस भावना से तैयार किया था कि हिन्दुओं के कानून हिन्दुओं पर समान रूप से लागू हो, इसके अन्तर्गत चार चीजें जोडी गयी– पहली, जन्म के आधार पर अधिकारों का समाप्त किया जाएं। दूसरा, महिलाओं को सम्पत्ति में पूरा

अधिकार मिले। तीसरा, लड़कियों को पिता की सम्पत्ति में हक मिले और चौथा महिलाओं और पुरूषों दोनों को तलाक के समान अधिकार दिये जायें। इस प्रकार उनहोंने समाज के दलित वर्गों के साथ–साथ अन्य पिछड़े वर्गों, महिलाओं, जनजातियों, कमजोर वर्गों इत्यादि में सामाजिक व राजनीतिक चेतना का संचार करने का अथक प्रयत्न किया। सदियों से एक परम्परा के रूप में चली आ रही हिन्दू सामाजिक व्यवस्था की कुरीतियों की चुनौती दी और उन्हें सचेत किया कि वे समय के अनुसार अपनी रूढ़िगत प्रथाओं में लचीलापन लायें तथा अपनी संकीर्ण विचारधारा में परिवर्तन करें।

संविधान के अन्तर्गत उन्होंने मूल अधिकारों तथा नीति–निर्देशन तत्वों में महत्वपूर्ण योगदान दिया। मूल अधिकार समानता, धर्मनिरपेक्षता तथा व्यक्तित्व की गरिमा की स्थापना करते हैं एवं सामाजिक न्याय एवं पिछड़े वर्गों के उत्थान के लिए संरक्षणात्मक विभेद की व्यवस्था करते हैं तथा निर्देशक तत्व सामाजिक आर्थिक लोकतंत्र का आधार है। वे अनुसूचित जातियों, जनजातियों के कल्याण के लिए एक शक्तिशाली संघीय सरकार का समर्थन करते थे क्योंकि उनके अनुसार गाँव एवं स्थानीय प्रशासन पर जातीय व्यवस्था का प्रभाव अधिक है। इसलिए दलितों के कल्याण का एक मात्र दायित्व स्थानीय एवं राज्य सरकारों को नहीं सौंपना चाहते थे।

डॉ0 अम्बेडकर ने अपने सार्वजनिक जीवन के प्रारम्भिक वर्षों से ही हिन्दू धर्म एवं हिन्दू समाज में परिवर्तन लाने के लिए संघर्ष किया जिससे दलितों को हिन्दू समाज में सम्मानजनक स्थिति प्राप्त हो सके किन्तु उन्हें अपने प्रयास में आशातीत सफलता प्राप्त नहीं हुई। अतः उन्होंने अनुभव किया कि जब तक हिन्दू धर्म है, जाति रहेगी और जब तक जाति है, दलित की दास्ता भी रहेगी इसलिए दलितों की मुक्ति तब तक संभव नहीं है जब तक वे हिन्दू धर्म का परित्याग नहीं करते। उनके अनुसार हिन्दू धर्म में स्वतंत्रता, समानता तथा भ्रातृत्व नहीं है और इसमें सामाजिक न्याय का अभाव है। यह अपने हजारों लोगों को पशुवत जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य करता है। यह उच्च वर्गों के हाथों बहुसंख्यक निम्न वर्ग के शोषण और दासता का प्रतीक है। हिन्दू धर्म की दासता से मुक्ति के लिए दलितों द्वारा हिन्दू धर्म का परित्याग जरूरी है। 13 अक्टूबर, 1935 को येवला में दलितों की सभा को सम्बोधित करते हुए जब डॉ0 अम्बेडकर ने धर्म परिवर्तन करने की घोषणा की थी तो उन्होंने कहा था कि 'दुर्भाग्य से मैं हिन्दू पैदा हुआ यह मेरे वश की बात नहीं थी किन्तु हिन्दू धर्म की अपमानजनक एंव शर्मनाक स्थिति में रहने से इंकार करना मेरी शक्ति सीमा में है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं हिन्दू रूप में नहीं मरूँगा।'[11] इसलिए उन्होंने 1956 में बुद्ध जयन्ती के अवसर पर बौद्ध धर्म में शिक्षा लेने की घोषणा कर दी और अन्ततः वृहस्पति दशहरे के दिन 14 अक्टूबर, 1956 को लगभग 2 लाख दलितों के साथ नागपुर में बौद्ध धर्म को स्वीकार किया।

डॉ0 अम्बेडकर ने सामाजिक न्याय पर विशेष बल प्रदान किया। वास्तव में न्याय कई प्रकार का होता है। जैसे विधिक न्याय, आर्थिक न्याय, राजनीतिक न्याय, धार्मिक न्याय, प्राकृतिक न्याय, वितरणात्मक न्याय, प्रशासनिक न्याय, स्त्री एवं बल न्याय तथा सामाजिक न्याय। निश्चय ही सभी प्रकार के न्याय मानव जीवन में महत्व

रखते हैं, क्योंकि डॉ0 अम्बेडकर की दृष्टि में उसमें न्याय के सभी पक्षों का समावेश है। सामाजिक न्याय सम्पूर्ण समाज की व्यवस्था का द्योतक है जबकि अन्य न्याय के प्रकार उसके किसी एक पक्ष को पूरा करते हैं। ये न्याय समाज व्यवस्था के ही अंग हैं, परन्तु उनका क्रियान्वयन थोड़े लोगों को लाभ पहुँचाता है। उन्हें सम्पूर्ण समाज की व्यवस्था बनाये रखने के लिए नियोजित किया जाता है क्योंकि समाज के समस्त अंगों को एक विराट न्याय की धारणा से जोड़ना पड़ता है। वह न्याय की विराट ध ाारणा सामाजिक न्याय है जिसमें विधिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, प्राकृतिक सभी प्रकार के न्याय समाहित है। गरीबी, बेगार तथा दरिद्रता मिटाना, स्त्रियों को समान प्रतिष्ठा देना, सम्पति एंव कृषि के झगड़ों केा निपटारा, अभाव गस्त लोगों को विधिक सहायता देना, पिछड़े वर्ग के लिए लोगों को आरक्षण प्रदान करना, राजनीतिक अधिकारों को कमजोर वर्ग के लोगों को सुलभ कराना तथा धार्मिक सद्भाव कायम रखना, ये सब सामाजिक न्याय के ही विभिन्न पक्ष है जिनकी सम्पूर्ति सम्पूर्ण समाज व्यवस्था को न्यायोचित बनाने में सहायक सिद्ध होती है।

सामाजिक न्याय समूचे समाज की सीमाओं को छूता है और उसमें रहने वाले समस्त नागरिकों की बन्धुत्व में बाधने का प्रयास करता है। चाहे वह अमीर या गरीब, सवर्ण हो या अवर्ण, हिन्दू हो या मुस्लिम अथवा सिख, ईसाई तथा बौद्ध हो। इसी कारण डॉ0 अम्बेडकर ने सामाजिक न्याय पर अत्यधिक बल दिया और कहा कि भारत में समाज व्यवस्था को न्याय, स्वतंत्रता, समता और भ्रातृत्व के आदर्शों में निर्मित किया जाना चाहिए जो सामाजिक न्याय के प्रमुख तत्व है। यह डॉ0 अम्बेडकर के कठिन प्रयत्नों का ही परिणाम है कि आज अछूतों एवं दलितों को समानता का अधिकार प्राप्त हो सका है। आज एक अछूत बालक स्कूलों में सवर्ण बालकों के साथ बैठकर पढ़ सकता है। अछूत तीर्थों, मन्दिरों आदि सभी सार्वजनिक स्थानों पर बिना रोक टोक प्रवेश कर सकते हैं। इसी प्रकार अब उन्हें राजनैतिक शक्ति भी प्राप्त हो गयी है परन्तु सबसे बड़ी उनकी उपलब्धि यह है कि वे अब हीन भावना के शिकार नहीं है और सामाजिक न्याय के मार्ग में आने वाली अधिकांश बाधाएं प्रत्यक्ष व वैधानिक रूप से हटने लगी है।

सन्दर्भ –

1. सिंह, डॉ0 रामगोपाल : 'सामाजिक न्याय एवं दलित संघर्ष', राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ एकेडमी, जयपुर, 1994, पृ. 17–18
2. सिह, आर0जी0 : 'भारत में सामाजिक परिवर्तन एवं सामाजिक समस्याएं', भोगपाल मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, 1986, पृ. 78
3. जाटव, डॉ0 डी0आर0 : 'सामाजिक न्याय का सिद्धान्त' समता साहित्य सदन, जयपुर, 1993, पृ. 2
4. मिलर, डेविड : 'दा ब्लैक वैल एनसाइक्लोपिडीया ऑफ पॉलिटिकल थॉट, न्यूयार्क, 1987, पृ. 60–61
5. जाटव, डॉ0 डी0आर0 : 'सामाजिक न्याय का सिद्धान्त' समता साहित्य सदन, जयपुर, 1993, पृ. 8
6. वही, पृ. 8
7. गाबा ओमप्रकाश : 'राजनीतिक सिद्धान्त की रूपरेखा' दिल्ली, 1991, पृ. 230–231
8. एनसाइक्लेपिडिया ऑफ सोशल साइन्स, भाग 15, पृ. 131–133
9. गुप्ता राजेश : डॉ0 अम्बेडकर और सामाजिक न्याय, प्रथम संस्करण, 1994, पृ. 61–62
10. महार पत्रिका के सम्भार से।
11. अम्बेडकर डॉ0 बी0आर0, धर्मपरिवर्तन सम्बन्धी डॉ0 अम्बेडकर के व्याख्यानों का हिन्दी संकलन, झिझंक, अम्बडकर साहित्य रक्षक परिषद्, 1981, पृ. 8